क़ीमत 5 रूपया

http://www.cgpi.org

आने वाले इंक़लाबी तूफ़ानों के लिये तैयारी करें!

मज़दूर एकता लहर

हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी की केन्द्रीय कमेटी का अख़बार

ग्रंथ–37, अंक – 8 | अप्रैल 16–30, 2023 | पाक्षिक अख़बार | कुल पृष्ठ–8

एक ऐतिहासिक पहल की 30वीं सालगिरह :

लोगों को सत्ता में लाने की आवश्यकता

हमारे हुक्मरान यह दावा करते हैं कि हिन्दोस्तान दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। इस दावे को आज से 30 साल पहले चुनौती दी गयी थी, उन लोगों द्वारा, जो जनसमुदाय की शक्तिहीन स्थिति के ख़िलाफ़ आवाज़ उठा रहे थे। 11 अप्रैल, 1993 को दिल्ली के कांस्टीट्यूशन क्लब में मज़दूर यूनियनों व महिला संगठनों के नेताओं, मानवाधिकार कार्यकर्ताओं, न्यायाधीशों, वकीलों, शिक्षाविदों और सांस्कृतिक कलाकारों सहित कम्युनिस्ट और अन्य राजनीतिक कार्यकर्ता, एक साथ मिले थे। उन्होंने प्रेपरेटरी कमेटी फॉर पीपल्स एम्पावरमेंट की स्थापना की थी।

ऐतिहासिक संदर्भ

1980 के दशक में राज्य द्वारा आयोजित सांप्रदायिक हिंसा और राजकीय आतंकवाद बहुत ज्यादा फैल रहे थे। 1993 की शुरुआत तक, लोगों की असुरक्षा अप्रत्याशित स्तर पर पहुंच गई थी। बाबरी मस्जिद के विध्वंस के बाद देश के कई हिस्सों में सांप्रदायिक हत्याएं हुयी थीं। संसद की दोनों प्रमुख पार्टियां, कांग्रेस पार्टी और भाजपा, उन जघन्य अपराधों के लिए दोषी थीं। उन घटनाओं के प्रति लोगों में गुस्सा और नफ़रत बढ़ रहे थे, क्योंकि लोग उन्हें रोकने में खुद को शक्तिहीन महसूस कर रहे थे।

उस अराजकता और तनावपूर्ण स्थिति के बीच, 22 फरवरी, 1993 को फ़िरोज़शाह कोटला में एक ऐतिहासिक रैली हुई थी, ठीक उसी स्थान पर जहां शहीद भगत सिंह और उनके साथियों ने हिंदुस्तानी सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन की स्थापना सभा की थी। वह रैली दिल्ली में कांग्रेस पार्टी की केंद्र सरकार द्वारा सभी सामूहिक सभाओं पर लगाये गये प्रतिबन्ध को चुनौती देते हुए, आयोजित की गयी थी।

फ़िरोज़शाह कोटला रैली और प्रेपरेटरी कमेटी फॉर पीपल्स एम्पावरमेंट की स्थापना आज इसलिए महत्व रखती है क्योंकि उन्होंने शासन की मौजूदा पार्टी–प्रधान व्यवस्था के विकल्प को तलाशने के लिए लोगों में चर्चा की शुरुआत की थी। उन्होंने उस समय ऐसा किया था, जब लोगों से कहा जा रहा था कि मौजूदा व्यवस्था का कोई विकल्प नहीं है।

फ़िरोज़शाह कोटला में रैली का आयोजन हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी, मज़दूर एकता कमेटी, पुरोगामी महिला संगठन, सहेली और पंजाब मानवाधिकार संगठन ने संयुक्त रूप से किया था। रैली में भाग लेने वालों ने सभी ज़मीर वाले महिलाओं और पुरुषों के लिये एक अपील जारी की थी। उन्होंने राजनीतिक प्रक्रिया में मूलभूत परिवर्तन का आह्वान किया था, ताकि लोगों को सत्ता में लाया जा सके और किसी भी पार्टी को अपनी मनमर्ज़ी से कार्य करने से रोका जा सके। उस अपील को देशभर के व्यापक राजनीतिक व सांस्कृतिक कार्यकर्ताओं से ज़बरदस्त समर्थन मिला था।

ये गतिविधियां ऐसे समय पर हो रही थीं, जब हिन्दोस्तानी सरमायदारों ने उदारीकरण और निजीकरण के ज़रिये वैश्वीकरण का जन–विरोधी कार्यक्रम शुरू किया था। बाबरी मस्जिद के विध्वंस को अंजाम देने और साम्प्रदायिक हिंसा भड़काने के बाद, कांग्रेस पार्टी और भाजपा संसद के बजट सत्र की तैयारी कर रही थीं। उन हालतों में, फ़िरोज़शाह कोटला में विरोध रैली को आयोजित किया गया था।

फ़िरोज़शाह कोटला रैली और प्रेपरेटरी कमेटी फॉर पीपल्स एम्पावरमेंट की स्थापना आज इसलिए महत्व रखती है क्योंकि उन्होंने शासन की मौजूदा पार्टी–प्रधान व्यवस्था के विकल्प को तलाशने के लिए लोगों में चर्चा की शुरुआत की थी। उन्होंने उस समय ऐसा किया था, जब लोगों से कहा जा रहा था कि मौजूदा व्यवस्था का कोई विकल्प नहीं है।

दुनिया के स्तर पर, वह ऐसा समय था जब सोवियत संघ का विघटन हो गया था और दुनिया के सरमायदारों ने ऐलान कर दिया था कि समाजवाद फेल हो गया है। प्रमुख साम्राज्यवादी शक्तियां समाजवाद को लोकतान्त्रिक अधिकारों का हनन करने वाली व्यवस्था बताते हुए, उसे बदनाम कर रही थीं। वे मांग कर रही थीं कि सभी देशों को बाज़ार द्वारा संचालित अर्थव्यवस्था और बहुपार्टीवादी प्रनिधितित्ववादी लोकतंत्र को

शेष पृष्ठ 2 पर

सरकार द्वारा ख़रीद में कटौती के कारण गेहूं की खुदरा क़ीमतों में तेज़ी आई

देशभर के क़स्बों और शहरों में काम करने वाले लोग जून 2022 से गेहूं की बढ़ती क़ीमतों का सामना कर रहे हैं। गेहूं जैसे ज़रूरी खाद्य पदार्थों की क़ीमतों में वृद्धि ने लोगों पर और बोझ डाल दिया है, जो पहले से ही एल.पी.जी., पेट्रोल और डीज़ल की बढ़ी हुई क़ीमतों का सामना कर रहे हैं।

2022 में गेहूं की क़ीमतों में कैसे उछाल आया? 2021–2022 की गेहूं की फ़सल के लिए 2015 रुपये प्रति क्विंटल का न्यूनतम समर्थन मूल्य (एम.एस.पी.) घोषित किया गया था। परन्तु, सरकार ने गेहूं की बहुत कम ख़रीद की। दूसरी ओर, पूंजीवादी व्यापारी और व्यापारिक निगम, किसानों से एम.एस.पी. से बहुत अधिक क़ीमत पर, 2100–2500 रुपये प्रति क्विंटल की दर से गेहूं ख़रीदने को तैयार थे। व्यापारी एम.एस.पी. से इतना अधिक भुगतान करने को इसीलिये तैयार थे क्योंकि उन्हें अपने स्टॉक को और अधिक क़ीमत पर बेचने की उम्मीद थी। यूक्रेन में युद्ध के कारण अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में गेहूं की क़ीमतें आसमान छू रही थीं। सरकार द्वारा मई 2022 में निर्यात पर प्रतिबंध लगाने की घोषणा करने तक, अंतर्राष्ट्रीय बाज़ारों में गेहूं की बढ़ी हुई क़ीमतों का पूंजीपति व्यापारियों और कॉरपोरेट घरानों ने पूरा फ़ायदा उठाया। जब घरेलू बाज़ार में खुदरा क़ीमतें बढ़ने लगीं तो सरकार जन–विरोध से बचने के लिए मजबूर हो गयी। निर्यात पर प्रतिबंध लगाने के बाद भी गेहूं के दाम ऊंचे बने रहे। बड़े व्यापारियों और व्यापारिक निगमों ने अंतर्राष्ट्रीय और घरेलू बाज़ार में ऊंची क़ीमतों से मुनाफ़ा बनाया।

संक्षेप में, सरकार ने यह सुनिश्चित किया कि निजी थोक व्यापारियों को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर और घरेलू बाज़ार में गेहूं बेचकर भारी मुनाफ़ा मिले। मार्च–अप्रैल 2022 में फ़सल के बाद गेहूं की ख़रीद न करके ऐसा किया गया है। इसके बजाय, उसने निजी व्यापारिक कंपनियों और बड़े व्यापारियों को किसानों से सीधे गेहूं ख़रीदने और खुदरा (अंतर्राष्ट्रीय और घरेलू) बाज़ार में बेचने की अनुमति दी। उसने स्पष्ट रूप से निजी व्यापारिक निगमों और बड़े थोक विक्रेताओं के हित में कार्य किया।

पूंजीपति वर्ग का प्रचार है कि निजी व्यापारियों को गेहूं बेचने वाले किसानों ने

शेष पृष्ठ 6 पर

सितंबर 2021 और दिसंबर 2022 के बीच

गेहूं की खुदरा क़ीमत सूचकांक

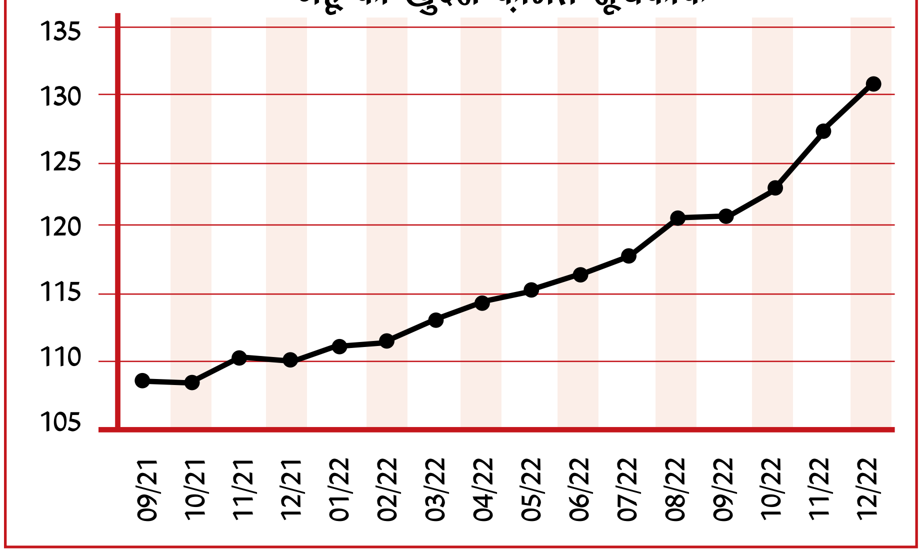

2021–22 में गेहूं की निरंतर बढ़ती क़ीमतें

अंदर पढ़ें

- फिलिस्तीनी लोगों के ख़िलाफ़ इस्राईली राज्य का आतंकवाद 3
- यूगोस्लाविया में अमरीका द्वारा आयोजित युद्ध की बरसी 4
- अमरीकी साम्राज्यवाद के लिबिया पर किये गए अपराध 5
- यमन पर अमरीकी आक्रमण 6
- तमिलनाडु के चमड़ा उद्योग से जुड़े मज़दूरों 7
- मज़दूर–किसान संघर्ष रैली 7

एक ऐतिहासिक पहल की सालगिरह

पृष्ठ 1 का शेष

अपना लेना चाहिए, जिसे वे लोकतंत्र की कसौटी मानते थे।

साम्राज्यवादी प्रचार, कि मौजूदा व्यवस्था का कोई विकल्प नहीं है, उसके बावजूद ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमरीका और हिन्दोस्तान सहित अन्य पूंजीवादी देशों में जनता उन राजनीतिक पार्टियों से नाराज़ थी, जो लोगों के नाम पर शासन करती थीं लेकिन लोगों के हितों के ख़िलाफ़ काम करती थीं। लोग बहुपार्टीवादी प्रनिधितित्ववादी लोकतंत्र से नाखुश थे और अपना असंतोष प्रकट कर रहे थे। लोग अपने हाथों में फ़ैसले लेने की शक्ति चाहते थे।

गंभीर विश्लेषण

हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी ने लोकतंत्र की मौजूदा व्यवस्था और राजनीतिक प्रक्रिया के गंभीर विश्लेषण को आगे बढ़ाने के लिए, कई विद्वानों और राजनीतिक कार्यकर्ताओं के साथ मिलकर काम किया, ताकि यह समझा जाये कि लोगों को सत्ता में लाने के लिए किस प्रकार के मूलभूत परिवर्तन आवश्यक हैं। उस काम से निम्नलिखित प्रमुख निष्कर्ष निकले :

- शासन की वर्तमान पार्टीवादी व्यवस्था, जिसे बहुपार्टीवादी प्रनिधितित्ववादी लोकतंत्र कहा जाता है, वह सरमायादारों की हुक्मशाही को थोपने और मज़दूर वर्ग तथा व्यापक जनसमुदाय को सत्ता से बाहर रखने के लिए बनायी गई है।
- यह पूरी व्यवस्था इस धारणा पर आधारित है कि लोग खुद अपना शासन करने में सक्षम नहीं हैं; इसलिए उन्हें इस या उस राजनीतिक पार्टी को फ़ैसले लेने की शक्ति सौंपने की आवश्यकता है।
- संविधान लोगों को संप्रभु नहीं बनाता है। सरकार चलाने वाली पार्टी संसद के सदस्यों के प्रति जवाबदेह नहीं है। संसद के सदस्य उस जनता के प्रति जवाबदेह नहीं होते हैं जिसका प्रतिनिधि वे खुद को बताते हैं।
- सबसे शक्तिशाली इजारेदार पूंजीपति अपने धनबल और मीडिया बल का प्रयोग करके, हर चुनाव में अपनी पसंदीदा पार्टी की जीत को सुनिश्चित करते हैं।
- लोगों की भूमिका मतदान के दिन शुरू होती है और उसी समय समाप्त भी हो जाती है। संसद क्या–क्या क़ानून बनाएगा, सरकार क्या–क्या नीतिगत फैसले लेगी – इन्हें निर्धारित करने में मतदाताओं की कोई भूमिका नहीं होती है।
- मौजूदा व्यवस्था ब्रिटिश उपनिवेशवादी हुकूमत की विरासत है। हालांकि 1947 में हिन्दोस्तानी हुक्मरान वर्ग को सत्ता का हस्तांतरण हुआ था, लेकिन लोग पहले की तरह ही शक्तिहीन बने रहे। (देखिये बॉक्स : कामरेड लाल सिंह के भाषण के कुछ अंश)

खतरनाक भ्रम

सरमायदारों ने पार्टीवादी शासन व्यवस्था के ज़रिये अपनी हुकूमत को वैधता दे रखी है। लोगों को सत्ता में लाने के लिए संघर्ष राज्य सत्ता के मूल चरित्र को बदलने का संघर्ष है। यह राज्य को पूंजीपतियों द्वारा लोगों पर शासन करने के एक हथकंडे से, लोगों द्वारा खुद अपना शासन करने के एक साधन में बदलने का संघर्ष है।

कामरेड लाल सिंह के भाषण के कुछ अंश*

सभी तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि वर्तमान राज्य की संस्थाओं को ब्रिटिश हुक्मरानों ने अपने हितों और अपने साथ जुड़ी ताक़तों के हितों की रक्षा के लिए विकसित किया था। आधुनिक हिन्दोस्तानी राज्य की नींव 1857 में डाली गयी थी। इसका मूल स्तंभ सेना थी, जिसे लोगों को दबाने के लिए सांप्रदायिक और जातिवादी आधार पर गठित किया गया था। तथाकथित प्रतिनिधित्व की संस्थाएं, जैसे गवर्नर जनरल की परिषद, केंद्रीय विधानमंडल, प्रांतीय विधानमंडल, आदि के दो उद्देश्य थे : पहला, लोगों के गुस्से के लिए एक सेफ्टी–वाल्व प्रदान करना ... और दूसरा, हुक्मरानों के हितों को अधिक मजबूती से सुरक्षित करने के लिए, उनके समर्थकों को सरकार में शामिल करना तथा उन्हें देश चलाने के लिए तैयार करना।

1947 में सत्ता का हस्तांतरण हुआ – ब्रिटिश हुक्मरानों के हाथों से हिन्दोस्तानी हुक्मरानों के हाथों में – लेकिन लोगों को सत्ता में लाने की दिशा में राजनीतिक प्रक्रिया और राजनीतिक संस्थानों का वास्तविक और ठोस परिवर्तन अभी तक नहीं हुआ है। तथाकथित प्रतिनिधित्व की संस्थाओं ने कार्यपालिका के विशेषाधिकारों और शक्तियों को संरक्षित और मजबूत किया है तथा अधिकांश लोगों को राजनीतिक सत्ता से बाहर रखा है।

हिन्दोस्तान में पूरी प्रौढ़ आबादी के लिए मतदान के अधिकार के विस्तार ने, राजनीतिक प्रक्रिया या राज्य सत्ता का मूल चरित्र नहीं बदला है। इस राज्य सत्ता का मूल चरित्र यह है कि यह लोगों पर शासन करने का एक हथकंडा है, न कि लोगों द्वारा खुद अपना शासन करने का साधन।

* 4–5 सितंबर, 1993 को प्रेपरेटरी कमेटी फॉर पीपल्स एम्पावरमेंट के एक सम्मेलन में दिया गया भाषण

17 मई, 1998 को पुणे विश्व विद्यालय में कमेटी फॉर पीपुल्स एम्पावरमेंट द्वारा आयोजित राजनीतिक सुधारों पर हुए सर्व–हिन्द सम्मेलन के कुछ दृश्य

पिछले 30 वर्षों में एक तरफ लोगों को सत्ता में लाने के आंदोलन और दूसरी तरफ हुक्मरान सरमायदारों की लोगों को गुमराह करने व बांटने की राजनीति, इन दोनों के बीच टकराव देखने में आया है। हुक्मरान वर्ग एक के बाद एक हानिकारक भ्रम फैलाता रहा है ताकि लोगों को पार्टीवादी शासन व्यवस्था के अन्दर बांध कर रखा जा सके।

1992–93 की घटनाओं के बाद फैलाए गए भ्रमों में से एक यह है कि अगर एक गठबंधन सरकार हो तो वह एक पार्टी की सरकार से ज्यादा बेहतर तरीक़े से लोगों की समस्याओं को प्रकट कर सकती है। यहां तक कि 1996 में एक गैर–कांग्रेस और गैर–भाजपा गठबंधन सरकार भी बनी थी। उसके बाद एक के बाद एक, भाजपा की अगुवाई वाली और फिर कांग्रेस पार्टी की अगुवाई वाली गठबंधन सरकारें बनीं। लेकिन इनसे कोई गुणात्मक परिवर्तन नहीं हुआ।

जबकि पार्टियों ने एक–दूसरे की जगह ले ली, तो निजीकरण और उदारीकरण के ज़रिये वैश्वीकरण का कार्यक्रम बेरोक चलता रहा है। देश की भूमि, श्रम और प्राकृतिक संसाधनों को हिन्दोस्तानी और विदेशी इजारेदार पूंजीपतियों की अमीरी बढ़ाने की सेवा में लगाया जाता रहा है। अमीर और ग़रीब के बीच की खाई लगातार बढ़ती जा रही है। मज़दूरों का शोषण तेज़ होता जा रहा है और करोड़ों–करोड़ों किसान बर्बाद हो रहे हैं।

चाहे किसी भी पार्टी या गठबंधन की सरकार बनी हो, राजनीति का अपराधीकरण बद से बदतर होता जा रहा है। राजकीय आतंक और साम्प्रदायिक हिंसा का बेलगाम इस्तेमाल पिछले 30 वर्षों की एक खासियत रही है।

राजनीतिक सत्ता से बाहर रखे जाने पर लोगों के बढ़ते असंतोष को देखते हुए, हुक्मरान वर्ग ने वर्ष 2000 में संविधान के कामकाज की समीक्षा के लिए, एक राष्ट्रीय आयोग बनाने का फ़ैसला किया था। उस आयोग के कार्य की शर्तों में स्पष्ट रूप से कहा गया था कि वह संसदीय लोकतंत्र की मौजूदा व्यवस्था के "मूल ढांचे" में किसी भी बदलाव का प्रस्ताव नहीं दे सकता है। इसका मतलब यह था कि बहुसंख्यक जनसमुदाय को सत्ता से बाहर रखते हुए, फ़ैसले लेने की शक्ति हुक्मरान गुट के हाथों में केंद्रित रहेगी।

संविधान के कामकाज की समीक्षा करने का वह पूरा अभ्यास इस हक़ीक़त को छिपाने के लिए किया गया था, कि यह संविधान लोगों को संप्रभु नहीं बनाता है। उसका उद्देश्य यह भ्रम फैलाना था कि समस्या का स्रोत केवल कुछ विशेष व्यक्तियों और पार्टियों में है, जो भ्रष्ट, सांप्रदायिक और अपराधी हैं।

राष्ट्रीय आयोग की विभिन्न सिफ़ारिशों को लागू किया गया है। मगर उससे अधिकांश लोगों की शक्तिहीन स्थिति में थोड़ा–सा भी फ़र्क़ नहीं पड़ा है। कई सुधारों, जैसे कि चुनावी बोन्ड का प्रयोग और निर्दलीय उम्मीदवारों को हतोत्साहित करना, जिनकी वजह से राजनीतिक प्रक्रिया पर पूंजीपतियों की पसंदीदा पार्टियों का वर्चस्व और मजबूत हो गया है, जबकि राजनीतिक प्रक्रिया हमेशा की तरह अपराधी, भ्रष्ट और सांप्रदायिक बनी हुई है।

2004 से शुरू होकर, हुक्मरान वर्ग ने यह भ्रम फैलाया कि इजारेदार पूंजीवाद को "मानवीय चेहरा" देना संभव है। यह भ्रम फैलाया गया कि सरमायादारी हुकूमत की मौजूदा व्यवस्था के चलते, सांप्रदायिकता और भ्रष्टाचार से निजात पाना मुमकिन है। लेकिन हमारे जीवन के अनुभव ने इन सभी भ्रमों को चकनाचूर कर दिया है।

कांग्रेस पार्टी ने 2004 में भाजपा की जगह ले ली और भाजपा ने 2014 में कांग्रेस पार्टी की जगह ले ली। न तो भ्रष्टाचार ख़त्म हुआ और न ही सांप्रदायिकता। संसद ने "इस्लामी आतंकवाद" के ख़िलाफ़ लड़ाई के नाम पर, एक के बाद एक कठोर क़ानून बनाए हैं, जिनमें टाडा (आतंकवादी और विघटनकारी गतिविधियां–रोकथाम अधिनियम) और यू.ए.पी.ए. (अवैध गतिविधियां रोकथाम संशोधन अधिनियम) शामिल हैं। देश के दिन–प्रतिदिन के मामलों में लोगों को कोई भी भूमिका निभाने से रोका गया है।

निष्कर्ष

पिछले तीस वर्षों ने इस बात की पुष्टि कर दी है कि जब तक पार्टीवादी शासन व्यवस्था बरकरार रहेगी, यानि कि राजनीतिक प्रक्रिया पर हुक्मरान वर्ग की पार्टियों का वर्चस्व बना रहेगा, तब तक लोगों की कोई भी समस्या हल नहीं होगी।

मौजूदा चुनावी प्रक्रिया के माध्यम से, भाजपा की जगह पर कांग्रेस पार्टी या किसी अन्य पार्टी को लाने से मेहनतकश लोगों के हित में कुछ भी नहीं बदलेगा। इजारेदार पूंजीपति समाज के लिए एजेंडा तय करते रहेंगे। लोग शक्तिहीन ही रह जायेंगे।

लोगों की शक्तिहीनता को समाप्त करने के लिए, राजनीतिक प्रक्रिया और राज्य सत्ता के मूल चरित्र में परिवर्तन लाने की आवश्यकता है। यह मज़दूर वर्ग के हित में है कि वह इस तरह के परिवर्तन को अंजाम देने के लिए व्यापक जनता का नेतृत्व करे। मज़दूर वर्ग को लोगों को सत्ता में लाने के संघर्ष का समर्थन करना होगा।

लोगों को सत्ता में लाने के संघर्ष में एक बहुत बड़ी बाधा कम्युनिस्ट आंदोलन में विभिन्न पार्टियों द्वारा मौजूदा राज्य, उसके संविधान और शासन की पार्टीवादी व्यवस्था के बारे में फैलाये गए भ्रम हैं। सभी कम्युनिस्टों का यह फ़र्ज़ बनता है कि वे मज़दूरों, किसानों और व्यापक जनसमुदाय के सामने एक ऐसी नई राजनीतिक व्यवस्था और प्रक्रिया के लिए संघर्ष करने की सख्त ज़रूरत को पेश करें, जिसमें लोग खुद अपना शासन करेंगे। हमें एक ऐसी व्यवस्था के लिए लड़ना चाहिए जिसमें किसी राजनीतिक पार्टी की भूमिका यह सुनिश्चित करने की हो, कि मेहनतकश लोग खुद अपने फ़ैसले ले सकें। यही वह सबक है, जो 1993 में शुरू हुई ऐतिहासिक पहल के बाद के तीन दशकों के अनुभव से निकलता है।

http://hindi.cgpi.org/23312

अल–अक्सा मस्जिद में इबादत करने वालों पर एक बार फिर बर्बर हिंसा :

फिलिस्तीनियों के ख़िलाफ़ इस्राइली राज्य के आतंकवाद की निंदा करें!

5 और 6 अप्रैल की लगातार दो रातों को इस्राइली सेना ने पूर्वी येरुशलम के इस्राइली क़ब्ज़े वाले अल–अक्सा मस्जिद पर धावा बोल दिया। मुस्लिमों के पवित्र रमजान के महीने के दौरान ये भड़काऊ हमले जानबूझकर किए गए हैं।

इस्राइली सेना जबरन मस्जिद में घुस गई, जब वहां पर नमाज चल रही थी। नमाज अदा कर रहे लोगों को बेरहमी से डंडों से पीटा गया, उनको हथकड़ी लगाई गई और उन्हें मस्जिद के फर्श पर लेटने के लिए मजबूर किया गया। सैकड़ों लोग घायल हो गए। चिकित्साकर्मियों को घायलों का इलाज करने से रोका गया। इन बर्बर हमलों के बाद, सैकड़ों फिलिस्तीनियों को गिरफ़्तार भी किया गया।

नमाज अदा कर रहे लोगों को बाहर निकालने के बाद, इस्राइली राज्य ने सुनियोजित तरीक़े से पुलिस की सुरक्षा में उग्र और उकसाने वाले कुछ गुटों को मस्जिद में भेजने की साज़िश रची। जिसका उद्देश्य था फिलिस्तीनी लोगों की बेईज़्ज़ती करना और उनके धार्मिक जज़्बातों को भड़काना।

अल–अक्सा मस्जिद पर हमले के बाद, इस्राइली सेना ने फिलिस्तीनी लोगों के बढ़ते विरोध को बेरहमी से कुचलने के लिए, गाजा पट्टी और दक्षिणी लेबनान पर हवाई बमबारी की।

अल–अक्सा मस्जिद को क्यों निशाना बनाया गया?

अल–अक्सा मस्जिद फिलिस्तीनियों के लिये, अपनी ज़मीन पर इस्राइल के जबरदस्ती क़ब्ज़े के ख़िलाफ़ प्रतिरोध की एक मिसाल बन गई है। यह मस्जिद पूर्वी येरुशलम में स्थित है, जिस पर 1967 में हुये एक छह–दिवसीय युद्ध के दौरान इस्राइल द्वारा जबरन क़ब्ज़ा कर लिया गया था। जिसके बाद, इसे इस्राइल के एक हिस्से के बतौर इस्राइल में मिला लिया गया था। युद्ध के दौरान लूटी गयी इस ज़मीन और उस पर किये गये क़ब्ज़े को संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा मान्यता नहीं दी गई है।

मुसलमान लोग अल–अक्सा मस्जिद को इस्लाम का तीसरा सबसे पवित्र स्थल मानते हैं। मस्जिद के परिसर में स्थित डोम ऑफ द रॉक जो सातवीं शताब्दी की एक संरचना है, जिसे मुसलमान लोग उस स्थान के रूप में मानते हैं जहां से पैगंबर मोहम्मद स्वर्ग का लिए रवाना हुए थे।

उसी परिसर के भीतर टेंपल माउंट भी स्थित है, जिसके बारे में यहूदी लोगों की मान्यता है कि बाइबल युग में यह यहूदी मंदिरों का स्थान था।

फिलिस्तीनी लोग अल–अक्सा को उन राष्ट्रीय प्रतीकों में से एक मानते हैं जिन पर उनका कुछ हद तक नियंत्रण है।

1967 के युद्ध में इस्राइल ने जिन फिलिस्तीनी क्षेत्रों पर क़ब्ज़ा कर लिया था जैसे कि – पूर्वी यरुशलम और वेस्ट बैंक, गोलन हाइट्स और गाजा पट्टी – उन स्थानों को फिलिस्तीनी लोगों को लौटाने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा बार–बार कहने के बावजूद भी इस्राइल ने उनको वापस करने से इनकार कर दिया है। यहां तक कि संयुक्त राष्ट्र संघ के अनेक प्रस्तावों का उल्लंघन करते हुए, अमरीका के समर्थन के बलबूते पर, इस्राइल ने येरूशलम को अपनी राजधानी घोषित कर दिया है।

इस्राइली राज्य ने फिलिस्तीनियों को मस्जिद पर नियंत्रण से वंचित करने के लिए बार–बार, अल–अक्सा परिसर में घुसपैठ की है और दंगों को आयोजित किया है। फिलिस्तीनियों ने अपने अधिकारों की रक्षा के लिए बेइंतहा संघर्ष किया है।

अल–अक्सा मस्जिद पर हमले बंद करने की मांग को लेकर लंदन में एक विरोध प्रदर्शन

2022 में इस्राइली सेना ने रमजान के दौरान मस्जिद पर ग्रेनेड से हमले किए थे और फिलिस्तीनियों को पीटा था। जिसमें सैकड़ों लोग घायल हो गये और सैकड़ों को गिरफ़्तार कर लिया गया। इसके बाद मार्च 2022 में इस्राइल के क़ब्ज़े वाले वेस्ट बैंक क्षेत्र में इस्राइल द्वारा आतंक फैलाया गया, जिसमें 36 लोग मारे गए थे।

इस्राइली सेना ने मई 2021 में रमजान के दौरान मस्जिद पर धावा बोल दिया था। इस हमले में सैकड़ों फिलिस्तीनी लोग घायल हुए थे। इसके साथ ही, इस्राइली राज्य ने पूर्वी येरुशलम के

येरूशलम के लायंस गेट पर प्रदर्शन करते हुये फिलिस्तीनी लड़के की गिफ़्तारी

शेख–जर्राह क्षेत्र में फिलिस्तीनियों पर क़ातिलाना हमले किए, ताकि उन्हें उनके घरों से जबरन बेदखल किया जा सके। मई 2021 में किये गए इस्राइल के इन हमलों के परिणामस्वरूप, 66 बच्चों सहित कम से कम 256 फिलिस्तीनियों की मौत हो गई थी और 1,900 से अधिक लोग घायल हो गये थे।

2023 की शुरुआत से इस्राइल ने अपने क़ब्ज़े वाले, येरूशलम क्षेत्र के लोगों पर अपने हमलों को और भी तेज़ कर दिया है। सिर्फ जनवरी 2023 में ही इस्राइली हमलों और छापेमारी में 8 बच्चों सहित 36 फिलिस्तीनी लोग मारे गए हैं।

अमरीकी साम्राज्यवाद का इस्राइली शासन को राजनीतिक और सैन्य समर्थन

फिलिस्तीनियों पर इस्राइल द्वारा किये जा रहे क़ातिलाना हमलों के इस नए दौर की, संयुक्त राष्ट्र संघ और अरब लीग के देशों, मिस्र, जॉर्डन, तुर्की, ईरान और सऊदी अरब सहित कई अन्य देशों ने कड़ी निंदा की है।

हालांकि, हक़ीक़त तो यह है कि दुनिया क्या सोचती है, इस्राइली राज्य इसकी परवाह किए बिना, फिलिस्तीनी लोगों पर अपने क़ातिलाना हमलों को बेशर्मी से जारी रखा है। ऐसा इसलिए संभव है क्योंकि इस्राइल को अमरीकी साम्राज्यवाद का पूरा समर्थन प्राप्त है। अमरीकी साम्राज्यवाद इस्राइल को ज्यादा से ज्यादा हथियारबंद करने में लगातार मदद कर रहा है। संयुक्त राष्ट्र संघ में इस्राइल की इन बर्बर करतूतों का बचाव करने के लिए अमरीका अपनी वीटो पावर का इस्तेमाल करता है।

अमरीका ने इस तेल समृद्ध पश्चिम एशिया पर अपना नियंत्रण और वर्चस्व स्थापित करने के लिए, इस्राइल को फिलिस्तीनी लोगों और अन्य अरब लोगों के ख़िलाफ़ एक बंदूक की नोक के रूप में खड़ा किया है। अमरीका यह बिल्कुल भी नहीं चाहता कि इस्राइल, फिलिस्तीन और अरब के अन्य देशों के लोग एक–दूसरे के साथ शांति से रहें। अमरीका इस क्षेत्र में लगातार टकराव को बढ़ावा देता रहता है।

अमरीकी साम्राज्यवादियों द्वारा नियंत्रित मीडिया, फिलिस्तीनियों पर इस्राइली हमले और फिलिस्तीनी लोगों के प्रतिरोध संघर्ष को, "दंगों" के रूप में पेश करती है, और 'दोनों पक्षों को संयम बरतने' का आह्वान करती है। यह प्रचार दोनों पक्षों के बीच, झूठी बराबरी पेश करके लोगों के बीच यह भ्रम फैलाता है कि कौन हमलावर है और किस पर सुनियोजित तरीक़े से हमला करके उसे तबाह किया जा रहा है। साम्राज्यवादियों के नियंत्रण वाला मीडिया फिलिस्तीनी लोगों द्वारा जीवन जीने और अपने अस्तित्व के अधिकार की सुरक्षा के लिए किये जा रहे संघर्ष को आतंकवाद के रूप में चित्रित करता है। वह मीडिया इस हक़ीक़त को छिपाने की कोशिश करता है कि इस तबाही के लिए इस्राइली राज्य ज़िम्मेदार है। साथ ही वह मीडिया इस्राइली राज्य द्वारा फैलाये जाने वाले आतंक और उसके अनगिनत अपराधों को छुपाने की कोशिश भी करता है।

1948 में अपनी स्थापना के बाद से ही इस्राइल राज्य एक आक्रामक और विस्तारवादी राज्य रहा है। इस्राइली राज्य ने शुरुआत से ही अपनी सेना को फिलिस्तीनी लोगों के क्षेत्र पर आक्रमण करने और उनकी ज़मीन पर क़ब्ज़ा करने के लिए भेजा है। इस्राइल ने कई युद्धों के दौरान फिलिस्तीनी लोगों की अधिक से अधिक ज़मीन पर क़ब्ज़ा कर लिया है। हक़ीक़त तो यह है कि इस्राइली राज्य ने 15 लाख से अधिक फिलिस्तीनी लोगों को – जॉर्डन, सीरिया, लेबनान, मिस्र, सऊदी अरब सहित इस क्षेत्र के विभिन्न देशों में फैले शरणार्थी शिविरों में, अपनी पूरी ज़िन्दगी बिताने के लिए मजबूर किया है।

इस्राइल के क़ब्ज़े वाले क्षेत्रों में रहने वाले फिलिस्तीनियों को रोज़ हमलों, विध्वंस और बेदख़ली के ख़तरों का सामना करना पड़ता है। इन क़ब्ज़े वाले क्षेत्रों के आसपास इस्राइली सैनिकों द्वारा स्थापित सैकड़ों चौकियों पर तलाशी के क्रूर तरीक़ों से तबाह फिलिस्तीनियों को रोज़ बेइज़्ज़त किया जाता है।

फिलिस्तीनियों के ख़िलाफ़ इस्राइली राज्य के सबसे गंभीर अपराधों में से एक यह है कि वह अपने क़ब्ज़े वाले क्षेत्रों में सुनियोजित साज़िश के तहत यहूदी आबादी की कॉलोनियों को बसाना चाहता है। यह चौथे जिनेवा कन्वेंशन का सीधा–सीधा और खुल्लम–खुल्ला उल्लंघन है, जो एक क़ब्ज़ाकारी शक्ति को अपने लोगों को उसके द्वारा अधिग्रहीत किसी भी क्षेत्र में स्थानांतरित करने से रोकता है। इस समय, इस्राइली क़ब्ज़े वाले वेस्ट बैंक और पूर्वी येरुशलम में लगभग 250 ऐसी अवैध सेटलर–कॉलोनियां हैं जिनमें 6 लाख से अधिक लोग रहते हैं। इन्हें इस्राइली राज्य की सशस्त्र सेनाओं द्वारा सुरक्षा प्रदान की जाती है। दूसरी ओर, अपनी खुद की ज़मीन पर रहने वाले फिलिस्तीनियों को वहां अपना घर बनाने की अनुमति पाने के लिए आवेदन पत्र देना पड़ता है। अपने खुद के घरों से निकाल के फेंके जाने और उनके घरों को तोड़कर उन्हें तबाह करने का ख़तरा हमेशा उनके ऊपर मंडराता रहता है।

दूसरे विश्व युद्ध की समाप्ति के बाद के वर्षों में, अमरीकी साम्राज्यवाद का समर्थन पाकर इस्राइल द्वारा फिलिस्तीनी लोगों के ख़िलाफ़ किए गए जुर्म, दुनिया के लोगों के ख़िलाफ़ साम्राज्यवाद द्वारा की गयी नाइंसाफ़ी की एक मिसाल के रूप में हमेशा पेश किये जाएंगे।

अपनी मातृभूमि को बचाने और अपने अधिकारों की रक्षा के लिए इस्राइली हमलों के ख़िलाफ़ फिलिस्तीनी लोगों का संघर्ष पूरी तरह से जायज़ है। हिन्दोस्तान के लोग और दुनियाभर के सभी न्यायपसंद लोग उनके संघर्ष का पूरा समर्थन करते हैं।

http://hindi.cgpi.org/23327

यूगोस्लाविया के ख़िलाफ़ अमरीका के नेतृत्व में आयोजित नाटो युद्ध की 24वीं वर्षगांठ :

अमरीकी साम्राज्यवाद और उसका नाटो सैन्य–गठबंधन – देशों की संप्रभुता के सबसे बड़े दुश्मन

24 मार्च, 1999 को अमरीकी कमान के तहत, नाटो सैन्यबलों ने यूगोस्लाविया के संप्रभु राज्य के ख़िलाफ़ अपना ज़ालिम, दंडनीय आक्रमण शुरू किया था। अमरीका, जर्मनी, फ्रांस, ब्रिटेन, इटली, कनाडा और नाटो के अन्य सदस्य देशों के सशस्त्र बलों ने यूगोस्लाविया पर बड़े पैमाने पर हवाई बमबारी शुरू की जो 10 जून, 1999 तक चली। इस युद्ध के लिए संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद की अनुमति नहीं ली गयी थी। हमलावरों ने एक ऐसे देश की संप्रभुता का बड़ी बेशर्मी के साथ, बिना किसी वजह के उल्लंघन किया था, जो संयुक्त राष्ट्र संघ का एक संस्थापक सदस्य था।

यूगोस्लाविया के टूटने से पहले बाल्कन राष्ट्र

यूगोस्लाविया पर बमबारी को सही ठहराने के लिए, अमरीकी साम्राज्यवादियों और उनके सहयोगियों ने ऐलान किया था कि यूगोस्लाविया की तत्कालीन सरकार यूगोस्लाविया के कोसोवा क्षेत्र में वहां रहने वाली अल्बानियन आबादी का क़त्लेआम कर रही थी। यह बाद में बिल्कुल सफेद झूठ साबित हुआ।

यूगोस्लाविया की तत्कालीन मिलोसेविक सरकार ने कोई क़त्लेआम नहीं आयोजित किया था। बल्कि इसके विपरीत, अमरीकी साम्राज्यवादी अल्बानियन आबादी के बीच सशस्त्र आतंकवादी गुटों को पैसा देकर, हथियार और प्रशिक्षण के द्वारा तैयार करके, यूगोस्लाविया में एक गृहयुद्ध आयोजित करने के लिए भड़का रहे थे।

मिलोसेविक सरकार को निशाना इसलिए बनाया गया था, क्योंकि उसने अपने देश की संप्रभुता से समझौता करने से इनकार कर दिया था। वह यूगोस्लाविया में नाटो सैनिकों की तैनाती और देश का फिर से विभाजन करने के लिए सहमत नहीं था। (बॉक्स देखें : मिलोसेविक पर मुक़दमा)

यूगोस्लाविया की वर्तमान विभाजित स्थिति

यूगोस्लाविया एक बहुराष्ट्रीय राज्य था जिसमें सर्बिया, क्रोएशिया, स्लोवेनिया, बोस्निया–हर्जेगोविना, मोंटेनेग्रो और मैसेडोनिया और कोसोवा के स्वायत्त क्षेत्र को मिलाकर, कई गणराज्य शामिल थे। यह एक ऐसा देश था जिसका जन्म प्रथम विश्व युद्ध के अंत में, ऑस्ट्रो–हंगेरियन साम्राज्य और तुर्की साम्राज्य के विघटन के बाद हुआ था। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान, यूगोस्लाविया पर जर्मनी और इटली की फ़ासीवादी ताक़तों का क़ब्ज़ा था। यूगोस्लाविया के लोगों ने अपने देश पर ज़बरदस्ती से क़ब्ज़ा करने वाली नाज़ी–फासीवादी ताक़तों के ख़िलाफ़, अपने देश की आज़ादी हासिल करने के लिए, बड़ी बहादुरी से संघर्ष किया था।

यूगोस्लाविया दक्षिण–पूर्व यूरोप में बाल्कन प्रायद्वीप का एक हिस्सा है। एक ओर अमरीका, और दूसरी ओर जर्मनी और फ्रांस, वे सभी पूरे यूरोप पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने के लिए बाल्कन क्षेत्र पर अपने नियंत्रण को स्थापित करना, एक महत्वपूर्ण क़दम मानते थे। बर्लिन की दीवार का गिरना, जर्मनी का पुनः एकीकरण और वारसॉ संधि का विघटन – इन हालातों से यह स्पष्ट हो रहा था कि शीत युद्ध समाप्त होने वाला था। पूर्वी यूरोप के देशों पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने के लिए अमरीका, जर्मनी और फ्रांस के बीच आपस में मिलीभगत भी थी और एक दूसरे के ख़िलाफ़ अविश्वास और टकराव भी था। वे अपने मंसूबों को हासिल करने के लिए, यूगोस्लाविया के क्षेत्रों और वहां पर रहने वाले लोगों पर अपना नियंत्रण और वर्चस्व क़ायम करना बहुत ज़रूरी मानते थे। उन साम्राज्यवादी शक्तियों ने यूगोस्लाविया को तोड़ने के लिए विभिन्न प्रकार की साज़िशें रचीं, जिसकी शुरुआत यूगोस्लाविया से क्रोएशिया और स्लोवेनिया के गणराज्यों को अलग करके की गयी थी ।

साम्राज्यवादी शक्तियों ने बोस्निया–हर्जेगोविना और कोसोवा में विभिन्न सशस्त्र गुटों को धर्म और राष्ट्रीयता के आधार पर क़त्लेआम आयोजित करने और लोगों की एकता को तोड़ने के लिए लामबंध किया। उन्होंने यह मांग की कि यूगोस्लाव सरकार, उनके देश में जो कुछ

यूगोस्लाविया के टूटने के पहले (ऊपर) और टूटने के बाद (नीचे) के बाल्कन क्षेत्र के मानचित्र

भी बचा था, उसे भी पूरी तरह से टुकड़े–टुकड़े करने के लिए सहमत हो जाये और 'शांति बनाए रखने' के बहाने, अमरीका–नाटो के सशस्त्र बलों को अपने देश पर क़ब्ज़ा करने की अनुमति दे।

यूगोस्लाविया पर नाटो के हमले के परिणामस्वरूप बड़े पैमाने पर लोगों की मौतें हुईं और देश का विनाश हुआ। लाखों लोगों ने अपना सब कुछ खो दिया और शरणार्थी बन गए। 80 प्रतिशत से अधिक बमबारी, नागरिक जन सुविधाओं – जैसे कि पुलों, आवासीय क्षेत्रों, कारखानों, औद्योगिक प्रतिष्ठानों, कार्यालयों, अस्पतालों और स्कूलों पर की गई थी। हजारों लोग मारे गए। 50,000 से अधिक बम विस्फोटों से पैदा हुए यूरेनियम ने लोगों के लिये दीर्घकालीन स्वास्थ्य समस्याएं पैदा कीं। रासायनिक उत्पादन–संसाधनों पर बमबारी ने पर्यावरण को दूषित कर दिया, जबकि इस लड़ाई में इस्तेमाल किये गए क्लस्टर बमों और विस्फोटक पदार्थों (माइंस) के कारण अगले कई वर्षों तक लोगों की मौतें और अपंगताएं जारी रहीं।

यूगोस्लाविया पर नाटो हमला, अंतरराष्ट्रीय क़ानून का खुल्लम–खुल्ला उल्लंघन था। वह हमला आने वाले समय में अंतरराष्ट्रीय क़ानून का उल्लंघन करने की एक मिसाल जैसा बन गया। वह हमला, संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर का घोर उल्लंघन था, जो किसी भी देश को दूसरे देश की संप्रभुता का उल्लंघन करने से स्पष्ट रूप से मना करता है। यूगोस्लाविया की संप्रभुता और क्षेत्रीय अखंडता का खुलेआम उल्लंघन किया गया था।

यूगोस्लाविया पर हमला, नाटो के गठन के बाद से उसका पहला खुलेआम सैन्य अभियान था। अमरीका और अन्य पश्चिमी साम्राज्यवादी शक्तियों द्वारा मानवता के ख़िलाफ़ और राष्ट्रों की आज़ादी और संप्रभुता के ख़िलाफ़ किए गए जुर्मों की श्रृंखला में वह हमला, एक निर्णायक मोड़ था।

नाटो सैन्य गठबंधन की स्थापना 1949 में अमरीका द्वारा, पश्चिमी यूरोप के 11 अन्य देशों के साथ मिलकर की गई थी। उसकी स्थापना का तथाकथित मक़सद उन देशों को सोवियत संघ के आक्रमण के ख़तरे से बचाना – ऐसा बताया गया था। इसके बाद, पश्चिम जर्मनी, ग्रीस, तुर्की और स्पेन भी नाटो गठबंधन के सदस्य बन गए। 1999 में यूगोस्लाविया पर नाटो बमबारी ने इस सफेद झूठ का पर्दाफ़ाश किया कि अमरीकी नेतृत्व वाली नाटो सेना सदस्य देशों को सोवियत संघ से बचाने के लिए बनाई गयी थी। उसने स्पष्ट दिखाया कि नाटो क्या था और क्या है – अन्य देशों और उनके लोगों पर अमरीकी दादागिरी का विस्तार करने के लिए युद्ध का एक साधन और सदस्य देशों के लोगों को अमरीकी गुलामी के तहत रखने का एक साधन। बाल्कन में युद्ध के बाद, नाटो क्रमशः अमरीकी साम्राज्यवाद की दुनिया पर अपना वर्चस्व क़ायम करने की रणनीति की सेवा में, अब एक वैश्विक सैन्य–बल में बदल गया है।

विश्व पर अपने प्रभुत्व को क़ायम रखने के लिए अमरीकी रणनीति

यूगोस्लाविया को अपने अधीन करने का युद्ध, 21वीं सदी में पूरी दुनिया पर अपना निर्विरोध वर्चस्व स्थापित करने की अमरीकी रणनीति का एक हिस्सा था।

1999 के बाद से नाटो सैन्य गठबंधन का लगातार विस्तार किया गया है, जिसमें अब यूरोप के 30 देश शामिल हैं। पूर्वी यूरोप के सभी पूर्व–समाजवादी देश अब इसके सदस्य हैं। सर्बिया को छोड़कर, यूगोस्लाविया के टूटने से उभरे सभी देश अब इसके सदस्य हैं। सोवियत संघ के टूटने से उभरे तीन गणराज्य – एस्टोनिया, लातविया और लिथुआनिया भी नाटो के सदस्य हैं। अमरीका, सोवियत संघ के विघटन से उभरे यूक्रेन, जॉर्जिया और अन्य गणराज्यों को भी नाटो में शामिल करने की कोशिश कर रहा है।

नाटो गठबंधन का अंतरराष्ट्रीय कार्यक्षेत्र भी बढ़ता जा रहा है। इसका विस्तार यूरो–अटलांटिक क्षेत्र के बाहर, काकेशस, मध्य एशिया, पूर्वी अफ्रीका, पश्चिम एशिया, उत्तरी अफ्रीका और हिंद महासागर, भूमध्य सागर और फारस की खाड़ी क्षेत्र में भी किया गया है। महत्वपूर्ण रणनैतिक जलमार्गों और समुद्री यातायात के मार्गों को नियंत्रित करने के अमरीकी साम्राज्यवाद और उसके नाटो सहयोगियों के मंसूबों को हासिल करने के लिए, नाटो युद्धपोतों को सोमालिया, जिबूती और यमन के तटों के निकट, लाल सागर और अदन की खाड़ी में भी तैनात किया गया है।

नाटो, उन सभी संप्रभु राष्ट्रों के ख़िलाफ़ आक्रामक युद्धों को अंजाम देने और उन्हें अपने अधीन करने का साधन बन गया है, जिन्हें अमरीकी साम्राज्यवाद, अपने

शेष पृष्ठ 5 पर

मिलोसेविक पर मुक़दमा

यूगोस्लाविया के ख़िलाफ़ नाटो के हमले के बाद, अमरीका और अन्य नाटो देशों ने एक युद्ध–अपराध न्यायाधिकरण (वार क्राइम्स ट्रिब्यूनल) में पूर्व यूगोस्लाव राष्ट्रपति मिलोसेविक के ख़िलाफ़ मुक़दमा चलाया था। वह न्यायाधिकरण, जो भूतपूर्व यूगोस्लाविया के लिए अंतर्राष्ट्रीय आपराधिक न्यायाधिकरण के नाम से जाना जाता है, उन हमलावर शक्तियों द्वारा स्थापित किया गया था। उस ट्रिब्यूनल को कोई अंतरराष्ट्रीय स्वीकृति प्राप्त नहीं थी। मिलोसेविक पर, क़त्लेआम और युद्ध–अपराधों का आरोप लगाया गया था। मुकदमे के दौरान, मिलोसेविक ने अपने ख़िलाफ़ लगाए गए सभी आरोपों को ख़ारिज़ कर दिया। उन्होंने सर्बिया को कमजोर और नष्ट करने और यूगोस्लाव गणराज्य संघ को नष्ट करने की साम्राज्यवादी शक्तियों की लंबे समय से चली आ रही रणनीति का पर्दाफ़ाश किया। सर्बिया के राष्ट्रपति और संसद ने, मिलोसेविक के मुकदमे को अवैध बताते हुए, उसकी कड़ी निंदा की। मुक़दमे के दौरान मिलोसेविक की हिरासत में ही मौत भी हो गई। उनकी मृत्यु के बाद, उस मुकदमे को समाप्त कर दिया गया था।

अमरीकी साम्राज्यवाद और उसके सहयोगियों द्वारा लीबिया पर किये गए जुर्म

बारह साल पहले, मार्च 2011 में अमरीकी नेतृत्व वाली नाटो सेना ने उत्तरी अफ्रीका में लीबिया पर लगातार बमबारी शुरू की थी। उनका उद्देश्य मुअम्मर अल–गद्दाफी की सरकार को हटाना, उसके स्थान पर अपनी पसंद की कठपुतली सरकार स्थापित करना और लीबिया पर अपना प्रभुत्व स्थापित करना था।

जब साम्राज्यवादियों ने लीबिया पर हमला शुरू किया था, उससे पहले लीबिया अफ्रीका का ऐसा देश जाना जाता था जहां के लोगों का जीवन–स्तर अफ्रीका में सबसे उन्नत था। लीबिया एक तेल समृद्ध देश था और उस तेल के व्यापार से प्राप्त राजस्व का इस्तेमाल करके, उस देश के लोगों को मुफ़्त स्वास्थ्य सेवा और शिक्षा प्रदान की जाती थी। इसके परिणामस्वरूप लीबिया में अन्य जन कल्याण के आंकड़ों के अलावा, शिक्षा का स्तर और अपेक्षित जीवनकाल काफी अधिक थे। शिशु और मातृ–मृत्यु दर भी बहुत कम थी। लीबिया के पास बेहतरीन बुनियादी ढांचा भी था।

गद्दाफी की सरकार, अमरीकी साम्राज्यवादियों और उसके नाटो सहयोगियों के लिए गले का कांटा बन गयी थी। वह साम्राज्यवादियों के मंसूबों को हासिल करने में एक बहुत बड़ा रोड़ा थी। उसने, उत्तरी अफ्रीका और पश्चिम एशिया के लोगों के ख़िलाफ़ की जाने वाली साम्राज्यवादी गतिविधियों का विरोध किया था। उसने फिलिस्तीनी लोगों के राष्ट्रीय अधिकारों के संघर्ष का समर्थन किया था। उसने अन्य अफ्रीकी देशों की सहायता के लिए अपने तेल से प्राप्त राजस्व का इस्तेमाल किया था। गद्दाफी की सरकार, अफ्रीकी संघ (अफ्रीकन यूनियन) – जो अफ्रीकी महाद्वीप के सभी देशों का एक संगठन था, उसको और मजबूत करने की कोशिश कर रही थी। अफ्रीकी देशों की अर्थव्यवस्थाओं को मजबूत करने के लिए, गद्दाफी सरकार ने यह भी प्रस्ताव रखा था कि अफ्रीका के देश, अमरीकी डॉलर या यूरो की बजाय, आपसी व्यापर के लिए अपनी मुद्रा स्थापित करें।

कई वर्षों से, अमरीकी साम्राज्यवाद और उसके सहयोगियों ने गद्दाफी सरकार को कमज़ोर करने के लिए बार–बार प्रयास किए थे। 2011 में, अमरीकी साम्राज्यवादियों ने शासन–परिवर्तन के लिए विभिन्न अरब देशों में विपक्षी ताक़तों द्वारा हिंसक विरोध प्रदर्शनों को आयोजित किया था। उन विरोध–प्रदर्शनों को 'अरब स्प्रिंग' विरोध का नाम दिया गया है। लीबिया के भीतर, अमरीका और उसके सहयोगियों ने सुनियोजित तरीक़े से कुछ विपक्षी शक्तियों को धन और हथियार देकर, लीबिया की सरकार के ख़िलाफ़ लामबंध किया था। इन साम्राज्यवाद से समर्थित गिरोहों ने देश में अराजकता और हिंसा फैलाई। अमरीका, ब्रिटेन और फ्रांस ने एक सुनियोजित अंतर्राष्ट्रीय अभियान चलाया कि लीबिया की सरकार मानवाधिकारों के घोर उल्लंघन के लिए दोषी है। फिर, लीबिया के नागरिकों को मानवीय सहायता प्रदान करने के नाम पर नाटो ने पहले लीबिया के ऊपर 'नो फ्लाई जोन' का ऐलान किया और फिर अपना क्रूर बमबारी का अभियान शुरू किया था।

न केवल लीबिया की सेना, बल्कि अपने देश की रक्षा करने के लिए हथियार उठाने वाले लीबिया के सभी लोगों को उस जालिम बमबारी का निशाना बनाया गया। फ्रांसीसी वायु सेना, ब्रिटिश रॉयल वायु सेना और रॉयल कैनेडियन वायु सेना ने पूरे लीबिया पर हजारों बम बरसाए। अमरीकी और ब्रिटिश नौ सैनिक बलों ने लीबिया पर सैकड़ों क्रूज मिसाइलें दागीं और लीबिया पर नौ सैनिक नाकाबंदी थोप दी। जिसके बाद, अगले कुछ महीनों में हुई बमबारी और इसके परिणामस्वरूप बढ़ी हुई हिंसा के कारण, हजारों लोगों की मौत हुई और हजारों को शरणार्थी बनने के लिए मजबूर किया गया। अक्तूबर 2011 में साम्राज्यवादी ताक़तों ने गद्दाफी को गिरफ़्तार कर लिया और उनकी हत्या कर दी।

उस समय के नाटो प्रमुख ने जिस अभियान को नाटो के सबसे "सफल" अभियानों में से एक बताया था, उसके परिणामस्वरूप एक समृद्ध और स्थिर देश को बेरहम गृहयुद्ध और विनाश के चक्र में फंसा दिया गया था, जो आज तक जारी है। पिछले 12 वर्षों में लीबिया को बेरहमी से लूटा और नष्ट किया गया है। देश को विभिन्न सशस्त्र गिरोहों के बीच में बांट दिया गया है और हर एक गिरोह को किसी न किसी विदेशी शक्ति का समर्थन प्राप्त है। ये सशस्त्र गिरोह और उनके विदेशी समर्थक, देश की समृद्ध तेल सम्पदा को लूट रहे हैं, जबकि देश की जनता को पूरी तरह से तबाह कर दिया गया है।

संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद चुपचाप देखती रही जब ज़ालिम साम्राज्यवादी शक्तियों के गठबंधन द्वारा, लीबिया जैसे एक छोटे से देश की संप्रभुता का बेरहमी से उल्लंघन किया गया था। जून 2020 में, संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार परिषद ने 2016 से लीबिया में मानवाधिकारों के उल्लंघन की जांच के लिए एक फैक्ट–फाइंडिंग मिशन की स्थापना की। 27 मार्च, 2023 को लीबिया पर संयुक्त राष्ट्र के स्वतंत्र फैक्ट–फाइंडिंग मिशन ने लीबिया में इस समय मानवाधिकारों की स्थिति पर अपनी अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत की। इस कमेटी ने निष्कर्ष निकाला कि लीबिया के लोग जिन हालातों का सामना कर रहे हैं, वे अत्यंत गंभीर हैं। रिपोर्ट ने बताया कि वर्तमान लीबिया सरकार के साथ–साथ, विभिन्न सशस्त्र मिलिशिया गिरोहों द्वारा अनेक युद्ध–अपराध और मानवता के ख़िलाफ़ अपराध जारी हैं।

इस तबाही के लिए कौन ज़िम्मेदार है? पूरे देश में अराजकता फैलाने के लिए और देश के सभी लोगों और उनके संसाधनों के विनाश के लिए, अमरीकी साम्राज्यवाद और उसके सहयोगियों और नाटो युद्ध मशीन को जवाबदेह ठहराया जाना चाहिए।

आज, अफ्रीका और पश्चिम एशिया के कई देश बेरहम गृहयुद्धों की वजह से हुयी तबाही के शिकार बने हुए हैं। अमरीकी साम्राज्यवादियों और ब्रिटेन और फ्रांस जैसी पुरानी उपनिवेशवादी ताक़तों ने इन देशों को बर्बाद करने और अपने–अपने साम्राज्यवादी हितों को आगे बढ़ाने के लिए विभिन्न सशस्त्र गिरोहों को धन और हथियार देकर लामबंध किया है।

लीबिया का विनाश, अमरीका की पूरी दुनिया पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने के रास्ते में सभी बाधाओं को ख़त्म करने की रणनीति का एक हिस्सा था। अमरीकी साम्राज्यवादियों ने अपने जुर्मों को जायज़ ठहराने के लिए, संयुक्त राष्ट्र संघ पर दबाव डाला है। ऐसी कोई भी सरकार जो अमरीकी लाइन को मानने से इनकार करती है उसे एक 'अत्याचारी' और 'हत्यारे' के रूप में बदनाम करने के लिए अमरीकी साम्राज्यवादियों ने वैश्विक मीडिया पर अपने एकाधिकार–नियंत्रण का इस्तेमाल किया है। उन्होंने शासन–परिवर्तन करने और अपने जुर्मों को सही ठहराने के लिए, समय–समय पर 'मानवीय सहायता' प्रदान करने, 'दुष्ट राज्यों' को ख़त्म करने, 'आतंकवाद के ख़िलाफ़ युद्ध' लड़ने और 'जन संहार के हथियारों' का पता लगाने जैसे बहाने पेश किये हैं। हक़ीक़त में इन सबका नतीजा हमारे सामने है – आम लोगों का जनसंहार और चुने हुए देशों की बेरहम बर्बादी जारी है।

लोगों को अमरीकी साम्राज्यवादियों और उनके सहयोगियों के झूठे प्रचार पर बिल्कुल भी विश्वास नहीं करना चाहिए और न ही वे ऐसा कर सकते हैं। अमरीकी साम्राज्यवाद और उसके नाटो सहयोगी देशों की संप्रभुता और शांति के सबसे बड़े दुश्मन हैं।

http://hindi.cgpi.org/23299

यूगोस्लाविया

पृष्ठ 4 का शेष

वैश्विक प्रभुत्व क़ायम रखने के इरादों के रास्ते में रोड़ा मानता है। आतंकवाद के ख़िलाफ़ युद्ध छेड़ने, मानवाधिकारों की रक्षा करने आदि के नाम पर, लोगों के ख़िलाफ़ इन कातिलाना हमलों और युद्धों को जायज़ ठहराया गया है। अफ़ग़ानिस्तान, इराक, लीबिया, सीरिया और कई अन्य देशों को, अमरीकी साम्राज्यवादियों और उनके सहयोगियों ने मिलकर, सुनोयोजित तरीक़े से बर्बाद कर दिया है।

अमरीकी साम्राज्यवाद ने ही यूक्रेन में चल रहे, विनाशकारी युद्ध को फैलाया है और जानबूझकर उसे और भी लंबा खींच रहा है। उसका उद्देश्य रूस को घेरना और कमजोर करना, जर्मनी और फ्रांस को कमजोर करना, यूक्रेन को नष्ट करना और यूरोप में अमरीकी प्रभुत्व को और मजबूत करना है।

पूर्वी एशिया में, अमरीका चीन को घेरने और एशिया पर अमरीकी प्रभुत्व स्थापित करने के उद्देश्य से नाटो गठबंधन की तरह ही, एक और सैन्य–गठबंधन क्वाड को बनाने की कोशिश कर रहा है।

अमरीकी साम्राज्यवाद दुनिया पर अपना वर्चस्व क़ायम रखने के लिए एक पुलिस की तरह काम करता है, और लोकतंत्र, मानवाधिकारों और नियम–आधारित व्यवस्था की रक्षा करने का दावा करता है। वास्तव में, अमरीकी साम्राज्यवाद देशों के बीच संबंधों को नियंत्रित करने वाले सभी अंतरराष्ट्रीय मानदंडों और परंपराओं का सबसे बड़ा उल्लंघनकर्ता है।

http://hindi.cgpi.org/23322

मज़दूर एकता लहर (इंटरनेट संस्करण)

हिन्दी : http://www.hindi.cgpi.org, **अंग्रेजी** : http://www.cgpi.org
पंजाबी : http://www.punjabi.cgpi.org **तामिल** : http://www.tamil.cgpi.org
ई मेल : melpaper@yahoo.com, mazdoorektalehar@gmail.com
Ph.09868811998, 09810167911

मज़दूर एकता लहर का वार्षिक शुल्क और अन्य प्रकाशनों का भुगतान आप बैंक खाते और पेटीएम में भेज सकते हैं

आप वार्षिक ग्राहकी शुल्क (150 रुपये) सीधे हमारे बैंक खाते में या पेटीएम क्यूआर कोड स्केन करके भेजें और भेजने की सूचना नीचे दिये फोन या वाट्सएप पर अवश्य दें।

खाता नाम–लोक आवाज़ पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रिब्यूटर्स
बैंक ऑफ महाराष्ट्र, न्यू दिल्ली, कालका जी
खाता संख्या–20066800626, **ब्रांच नं.**–00974
IFSCode: MAHB0000974, मो.–9810167911
वाट्सएप और पेटीएम नं.-9868811998
email: mazdoorektalehar@gmail.com

यमन पर अमरीकी आक्रमण :

अमरीकी साम्राज्यवाद के जुर्मों की कड़ी निंदा की जानी चाहिए!

आठ साल पहले, सऊदी अरब के नेतृत्व में, अरब–देशों में अमरीकी साम्राज्यवाद के सहयोगियों की एक संयुक्त सेना ने, अरब–प्रायद्वीप के एक संप्रभु देश, यमन के ख़िलाफ़ चौतरफा युद्ध शुरू किया था। उस अभियान में 1,50,000 सैनिकों और 100 लड़ाकू विमानों का इस्तेमाल किया गया था।

उस हमले से पहले कई सालों तक, यमन में लोग अली अब्दुल्ला सालेह के बेहद अलोकप्रिय शासन, जिसे अमरीका और सऊदी अरब का समर्थन प्राप्त था, उसके खिलाफ लड़ रहे थे। 2012 की शुरुआत में अमरीका और सऊदी अरब ने सालेह के स्थान पर अब्दराबुह मंसूर हादी को सत्ता में लाने की साज़िश रची थी। लेकिन यमन के लोगों ने महसूस किया कि उस से उनके हालातों में कोई बदलाव नहीं आएगा और इसलिए उन्होंने अपना संघर्ष जारी रखा। सितंबर 2014 में, हौथियों के नेतृत्व में एक मिलिशिया (फ़ौज), देश की राजधानी साना पर क़ब्ज़ा करने में सफल रही और प्रेसिडेंट हादी को भागकर, एडेन के दक्षिणी बंदरगाह पर शरण लेने के लिए मजबूर होना पड़ा था।

यमन एक तेल और गैस संसाधनों से समृद्ध देश है। यह बड़े रणनैतिक महत्व वाले स्थान पर, रेड सी (लाल सागर) के तट पर स्थित है, जिस समुद्री मार्ग से प्रतिदिन लाखों बैरल तेल का आवागमन होता है। प्रेसिडेंट हादी की कठपुतली सरकार को हटाना, यह अमरीका के साथ–साथ ब्रिटेन और यूरोपीय संघ को भी मंजूर नहीं था। यमन पर हमला शुरू करने के लिए एक गठबंधन बनाया गया था। हालांकि प्रत्यक्ष आक्रमण, उनके अरब सहयोगियों और सूडान द्वारा किया गया था, लेकिन इन साम्राज्यवादियों ने हमलावरों को हथियारों और अन्य तरीक़ों से पूरा–पूरा समर्थन प्रदान किया था, जिसके बिना वह आक्रमण जारी नहीं रखा जा सकता था।

आज, आठ साल बाद आक्रमणकारी ताक़तें साना और देश के उत्तरी भाग पर हौथियों के नियंत्रण को ख़त्म करने में असमर्थ रही हैं। लेकिन वर्षों की बमबारी, लड़ाई और अमरीका द्वारा लगाए गए आर्थिक प्रतिबंधों ने देश को बर्बाद करके एक बंजर भूमि में बदल दिया है और इसके कारण लोगों के बीच भारी तबाही मचाई गयी है। ज़मीनी हालातों के बारे में कुछ दर्दनाक तथ्य इस प्रकार हैं :

- यूनाइटेड नेशंस पापुलेशन फण्ड (संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष) ने बताया है कि यमन के 80 प्रतिशत से अधिक लोगों को तुरंत सहायता की सख़्त ज़रूरत है। इसमें लाखों बच्चे शामिल हैं।
- यू.एन. हाई कमीशन फॉर रेफ्युजीस (शरणार्थियों के लिए संयुक्त राष्ट्र उच्चायोग) का अनुमान है कि लड़ाई के कारण लगभग 60 लाख लोग विस्थापित हुए हैं।
- यू.एन. डेवलपमेंट प्रोग्राम (संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम) के अनुमानित आंकड़ों के अनुसार, लड़ाई के परिणामस्वरूप 4,00,000 से अधिक लोग मारे गए हैं, जिनमें 1,50,000 लड़ाई में मारे गए और शेष बीमारी, भुखमरी, आवश्यक चिकित्सा सामग्रियों और भोजन की नाकाबंदी और युद्ध के अन्य प्रभावों के कारण मारे गए।
- पांच साल से कम उम्र के 6,32,000 बच्चे तथा 15 लाख गर्भवती महिलाएं और शिशुओं को दूध पिलाने वाली माताएं अत्यधिक कुपोषण से पीड़ित हैं।
- बमबारी से देश की सैकड़ों स्वास्थ्य सुविधाएं, स्कूल और अन्य जन सुविधाएं नष्ट हो गई हैं।

सीरिया, लीबिया, अफ़ग़ानिस्तान और अन्य देशों की तरह, यमन आज एक और मिसाल है, जिसमें अमरीकी साम्राज्यवाद और उसके सहयोगियों ने अपने हितों के लिए पूरे देश और उसके लोगों का विनाश किया है। साम्राज्यवादी अपने मंसूबों को हासिल करने के रास्ते में आने वाली ऐसी किसी भी रुकावट को हटाने के लिए पूरी तरह से तैयार हैं जो अन्य देशों पर उनकी पकड़ को कमजोर कर दे, विशेष रूप से उन देशों पर जो तेल, खनिज और उर्जा जैसे प्राकृतिक संसाधनों से समृद्ध हैं या जो रणनैतिक महत्व वाले स्थान पर स्थित हैं। यमन के मामले में, वे ऐसी किसी भी ताक़त को सत्ता में आने से रोकने के लिए दृढ संकल्प हैं, जिसके साथ इस क्षेत्र में उनके कट्टर दुश्मन, ईरान के अच्छे संबंध हैं। यमन दिखाता है कि ये बर्बर, जालिम ताक़तें अपने हितों की रक्षा के लिए किस हद तक जा सकती हैं।

वर्तमान में, पिछले साल की बातचीत के बाद तय किया गया संघर्ष विराम कुछ हद तक अभी भी लागू है। जनवरी में सऊदी सरकार और हौथी मिलिशिया के बीच हुई वार्ता और पिछले महीने सऊदी अरब और ईरान के बीच राजनयिक संबंधों को बहाल करने के लिए समझौता, इस लड़ाई से कुछ राहत दिलाने या इसे ख़त्म करने की संभावनाएं पैदा कर सकती हैं। लेकिन यमन के लोगों को उनके देश पर साम्राज्यवादियों द्वारा आयोजित बर्बर हमले के कारण बीते वर्षों में जिस अत्यधिक पीड़ा और तबाही को झेलना पड़ा है, उसके घाव किसी भी तरह से नहीं भरे जा सकते।

http://hindi.cgpi.org/23303

ख़रीद में कटौती के कारण खुदरा गेहूं की क़ीमतों में तेज़ी आई

पृष्ठ 1 का शेष

बाकी आबादी की क़ीमत पर मुनाफ़ा कमाया है। सच तो यह है कि व्यापारियों ने ही भारी मुनाफ़ा कमाया है। जबकि किसानों को 2022 में उनकी उपज के लिए एम.एस.पी. से अधिक क़ीमत मिली लेकिन उनकी कमाई व्यापारियों द्वारा लिए गए मुनाफ़े का एक छोटा हिस्सा मात्र थी। इसके अलावा, हर साल एम.एस.पी. से अधिक क़ीमतों पर ख़रीद की कोई गारंटी नहीं होती है; किसान बाज़ार की अस्थिर परिस्थितियों पर निर्भर होते हैं।

राज्य किसानों को लाभकारी क़ीमतों पर गारंटीकृत ख़रीद और आम जनता के लिए उचित क़ीमतों पर खाद्यान्न सुनिश्चित करने के अपने दायित्व को स्वीकार नहीं करता है। बड़े व्यापारी और इजारेदार कॉर्पोरेट घराने, जो ख़रीद और वितरण पर अपना पूर्ण नियंत्रण चाहते हैं। सरकार उनके द्वारा तय किये गये एजेंडे को पूरा करने का काम करती है।

उपभोक्ता मामले, खाद्य और सार्वजनिक वितरण मंत्रालय के आंकड़ों के अनुसार, जनवरी–दिसंबर 2022 की तुलना में, गेहूं और आटे की क़ीमतों में 150 प्रतिशत से अधिक की बढ़ोतरी हुई है। जनवरी 2023 के बीच में पूरे हिन्दोस्तान में आटे का दैनिक औसत खुदरा मूल्य 35 रुपये प्रति किलोग्राम के ऊंचे स्तर पर पहुंच गया था।

सरकारी प्रचार के अनुसार गेहूं की क़ीमत में वृद्धि का एक कारण यह है कि अक्तूबर 2021–मार्च 22 में रबी फ़सल के दौरान गेहूं का उत्पादन कम हुआ। यह झूठ है। गेहूं का उत्पादन केवल लगभग 30 लाख टन घटकर 1068 लाख टन रह गया था, यानी कि 3 प्रतिशत से भी कम की गिरावट हुई थी। यह गिरावट कोई मायने नहीं रखती जबकि नवंबर 2021 में सरकार के पास 400 लाख टन से अधिक का गेहूं का स्टॉक था।

2022 में, सरकार ने अपने स्टॉक में वृद्धि नहीं की क्योंकि उसने केवल 187 लाख टन की ख़रीद की जो कि पिछले वर्ष की तुलना में आधे से भी कम थी। 1 नवंबर, 2021 के 420 लाख टन सरकारी स्टॉक से घटकर नवंबर 2022 की शुरुआत में सरकार का गेहूं का स्टॉक आधा रह गया था, यानि कि केवल 210 लाख टन। सरकार ने जनवरी–फरवरी 2023 में गेहूं का कुछ स्टॉक जारी कर दिया जिसके बाद यह और कम हो गया। 1 जनवरी, 2023 को सरकार के पास कम से कम 138 लाख टन का गेहूं का स्टॉक ज़रूर होना चाहिये; इसके मुक़ाबले मार्च 2023 की शुरुआत में गेहूं का स्टॉक केवल 117 लाख टन ही है, जो कि 5 साल के न्यूनतम स्तर पर है। दूसरे शब्दों में, गेहूं की सार्वजनिक ख़रीद में कटौती करना और निजी थोक व्यापारियों को किसानों से सीधे गेहूं ख़रीदकर मुनाफ़ा कमाने की अनुमति देना, यह सरकार की जानबूझकर और सोची–समझी नीति है।

इन घटनाओं से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि हिन्दोस्तानी राज्य किसानों को लाभकारी क़ीमतों पर गारंटीकृत ख़रीद और आम जनता के लिए उचित क़ीमतों पर खाद्यान्न सुनिश्चित करने के अपने दायित्व को स्वीकार नहीं करता है। बड़े व्यापारी और इजारेदार कॉर्पोरेट घराने, जो ख़रीद और वितरण पर अपना पूर्ण नियंत्रण चाहते हैं। सरकार उनके द्वारा तय किये गये एजेंडे को पूरा करने का काम करती है।

इस स्थिति को बदलने के लिए और मुट्ठीभर इजारेदार पूंजीपतियों की लालच के बजाय मज़दूरों और किसानों की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए अर्थव्यवस्था की दिशा को बदलना होगा। यह मज़दूरों और किसानों की मांग है। इसे तभी पूरा किया जा सकता है जब किसानों और शहरों की कामकाजी आबादी के हितों की रक्षा के उद्देश्य से राज्य खाद्यान्नों की ख़रीद, भंडारण और वितरण को अपने हाथ में ले लेगा।

http://hindi.cgpi.org/23272

भारतीय रेल का निजीकरण हमें मंजूर नहीं

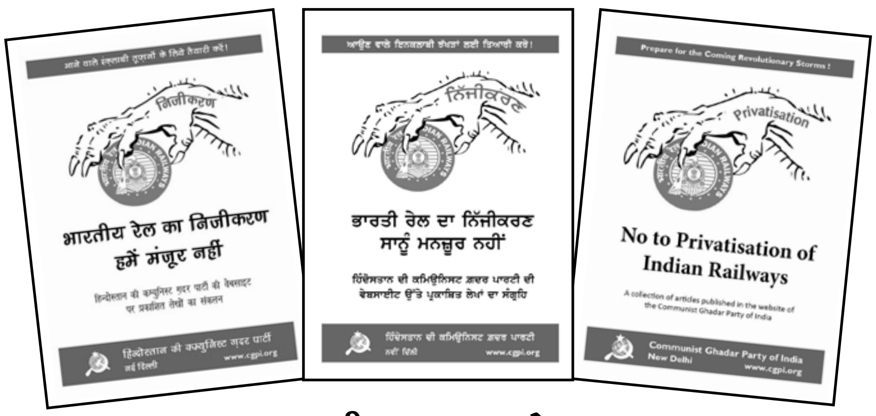

क़ीमत 20 रूपये
हिन्दी, अंग्रेजी और पंजाबी में उपलब्ध

तमिलनाडु के चमड़ा उद्योग से जुड़े मज़दूरों ने एक जुझारू विरोध प्रदर्शन किया

तमिलनाडु के चमड़ा उद्योग से जुड़े मज़दूर अपने अधिकारों के लिए लंबे समय से संघर्ष कर रहे हैं। पिछले कुछ वर्षों के दौरान, निर्यात में कमी आने के बाद और फिर कोविड के नाम पर बार–बार लगाए गए लॉकडाउन के परिणामस्वरूप, चमड़ा उद्योग की कई इकाइयां बंद हो गई हैं। पिछले वर्ष, यूरोपीयन यूनियन (ई.यू.) की अर्थव्यवस्था में हुई मंदी का तमिलनाडु के चमड़ा उद्योग पर एक गंभीर प्रभाव पड़ा है। तमिलनाडु से निर्यात होने वाले कुल चमड़े का 50 प्रतिशत निर्यात यूरोपीयन यूनियन के देशों के लिये किया जाता है। पिछले कुछ वर्षों में इस उद्योग से जुड़े हजारों मज़दूरों ने अपनी नौकरियां खो दी हैं।

18 मार्च को चमड़ा उद्योग से जुड़े मज़दूरों ने तमिलनाडु में वेल्लोर के पास एक बड़े औद्योगिक शहर, वानियामबाडी में एक ज़ोरदार जुझारू विरोध प्रदर्शन किया। चर्मशोधन–कारखानों, चमड़े का सामान और जूते–चप्पल बनाने वाली कंपनियों के मज़दूरों ने तमिलनाडु ट्रेड यूनियन सेंटर के बैनर तले विरोध प्रदर्शन किया, जिनमें अबू नासिर टैनरी और एस.जी. गारमेंट्स के मज़दूर भी शामिल हुये। तमिलनाडु राज्य में अंबूर–वानियमबाडी–तिरुपत्तूर क्षेत्र में 700 से अधिक चर्म–शोधन कारखाने और चमड़ा और जूते के कारखाने हैं। इन कारखानों पर 1 लाख 50 हजार लोगों का रोज़गार निर्भर है।

यूनियन के महासचिव कॉमरेड यू. रुबेन ने विरोध प्रदर्शन का नेतृत्व किया। यूनियन के संयुक्त महासचिव कॉमरेड दक्षिणामूर्ति ने सभी मज़दूरों का स्वागत किया। तोड़ीलालार ओट्टुमई इयक्कम (मज़दूर एकता कमेटी), मक्कल थमिजगम कच्ची, मार्क्सिया पेरियारिया पोथुवुडमई कच्ची, तमिल देसा इरायनमई, वेक इंडिया (डब्ल्यू.आई.टी.एस.) वर्कर्स यूनियन–होसुर और टू व्हीलर बाइक रिपेयरर्स संगम के प्रतिनिधियों ने भी इस विरोध प्रदर्शन में भाग लिया और सभा में अपनी बात रखी।

कॉमरेड रुबेन ने अपने भाषण में कहा कि पूंजीवाद के विश्वव्यापी आर्थिक

संकट और पूंजीपतियों की लालच के कारण, मज़दूर बहुत ही बुरी तरह से तबाह हुए हैं। पूंजीपति, केंद्र सरकार के समर्थन के बलबूते पर बड़ी ही चालाकी से कंपनी अधिनियम–2013, दिवाला और दिवालियापन संहिता–2016 और एस.ए. आर.एफ.ए.ई.एस.आई. अधिनियम–2002 का इस्तेमाल कर रहे हैं। और मज़दूरों को अपनी लंबी सेवा से अर्जित सुविधाओं और नौकरी छूटने के बाद मिलने वाले लाभों, जो उनके अधिकार हैं, उनसे वंचित कर रहे हैं। इन क़ानूनों के अनुसार, कंपनियों, वित्तीय संस्थानों और बैंकों से लिये गये क़र्ज़ के भुगतान की प्राथमिकता अधिक है जबकि मज़दूरों के बकाया पैसे के भुगतान की प्राथमिकता कम है। इस प्रकार मज़दूरों को दिनदहाड़े धोखा दिया जाता है और उनको खाली हाथ सड़कों पर फेंक दिया जाता है।

2019 के अंत तक टी.ए.डब्ल्यू. फुटवियर कंपनी को बंद कर दिया गया जिसके कारण 2300 मज़दूर बेरोज़गार हो गए और फिर टी.ए.डब्ल्यू. के चमड़े के कारखाने को भी बंद कर दिया गया, जिसकी वजह से वहां के 400 और मज़दूरों को भी नौकरी से निकाल दिया गया। के.ए.आर. ग्रुप की फ्लोरिन शूज कम्पनी 2018 में बंद हो गई, जिससे लगभग 3,000 मज़दूरों की छंटनी हुई। एस.एस.सी. शूज को 2012 में बंद कर दिया गया था, जिसमें से 400 मज़दूरों को निकाल दिया गया था और एस.एस.सी. बोनावेंचर शूज को बंद करने के परिणामस्वरूप 1200 मज़दूरों को अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ा था। वानीयंबाडी में अबू नासिर चमड़े के कारखाने से 2019 के बाद से 40 मज़दूरों की नौकरी चली गई है। तमिलनाडु के 40 मज़दूरों और उत्तर–पूर्वी राज्यों के 60 मज़दूरों सहित एस.जी. गारमेंट्स के कुल 100 मज़दूरों ने 2021 से अब तक अपनी नौकरी खो दी है।

इस प्रकार, कार ग्रुप, एस.एस.सी. ग्रुप, अम्बुर के टी.ए.डब्ल्यू. ग्रुप और अबू नासिर चमड़ा कारखाना और वनियामबादी के एस.जी. गारमेंट्स और अनगिनत अन्य औद्योगिक कंपनियों ने हजारों मज़दूरों को नौकरी से बाहर निकाल दिया है। इन मज़दूरों को नौकर छूटने से मिलने वाले क़ानूनी लाभों और मुआवज़ों से वंचित किया है, जिनके वे हक़दार थे। ये कंपनियां सरकार से मिलीभगत के बलबूते पर ही मज़दूरों के साथ धोखा कर रही हैं।

इन कंपनियों में काम करने वाले पुरुषों और महिलाओं ने विरोध प्रदर्शन में हिस्सा लिया और छंटनी किए गए कर्मचारियों के बकाये मुआवज़े का तत्काल भुगतान करने की मांग को लेकर नारेबाजी की। विभिन्न संगठनों के वक्ताओं ने प्रदर्शनकारियों को संबोधित किया। उन्होंने बताया कि पूंजीपति वर्ग किस तरह, राज्य के समर्थन के बलबूते पर मज़दूरों के बकाये मुआवजे को न देकर उनके साथ धोखा करता है। पूंजीपति ऐलान करते हैं कि कंपनी दिवालिया हो रही है और 'घाटे में चल रही' घोषित करके बंद करने को सही ठहराते हैं और फिर उसी पूंजी को अन्य लाभकारी क्षेत्रों में लगा देते हैं। वक्ताओं ने मज़दूरों को एक साथ आकर, एकजुट होने और अपनी न्यायोचित मांगों को जीतने के लिए अपने जुझारू संगठन बनाने और मजबूत करने की आवश्यकता पर ज़ोर दिया।

वक्ताओं ने पूंजीपतियों की हुकूमत के स्थान पर मज़दूरों और किसानों का शासन स्थापित करने के उद्देश्य से अपने अधिकारों के लिए संघर्ष छेड़ने की आवश्यकता की ओर इशारा किया। उन्होंने बताया कि उनका यह विरोध प्रदर्शन, उस दिन आयोजित किया जा रहा था जिस दिन मज़दूर वर्ग ने पेरिस कम्यून की स्थापना की थी और इसलिए यह दिन मज़दूर वर्ग के लिए एक महान ऐतिहासिक महत्व का दिन है। उन्होंने याद दिलाया कि 152 साल पहले आज ही के दिन फ्रांस की राजधानी पेरिस के मज़दूरों ने क्रांति के द्वारा पूंजीपति वर्ग को उखाड़ फेंका था और अपना शासन स्थापित किया था। उन्होंने पूंजीपति के राज्य के स्थान पर एक नए राज्य की स्थापना की थी। हालांकि पेरिस कम्यून केवल दो महीने तक ही टिक पाया परन्तु उस अमूल्य अनुभव से मज़दूर वर्ग ने बहुत कुछ सीखा है। सबसे महत्वपूर्ण सीखों में से एक यह है कि मज़दूर वर्ग केवल पूंजीपति वर्ग के मौजूदा राज्य तंत्र को अपने क़ब्ज़े में लेकर अपना शासन स्थापित नहीं कर सकता। इसे एक नया राज्य स्थापित करना होगा और पेरिस कम्यून ने दिखाया कि ऐसे नए राज्य की विशेषताएं क्या होंगी।

एक बहुत ही जुझारू माहौल में विरोध प्रदर्शन समाप्त हुआ। मज़दूरों और किसानों का शासन स्थापित करने के लक्ष्य के साथ, मज़दूरों ने शोषण और उत्पीड़न के ख़िलाफ़ अपना अनवरत संघर्ष जारी रखने का संकल्प व्यक्त किया।

http://hindi.cgpi.org/23332

नई दिल्ली में मज़दूर–किसान संघर्ष रैली

नई दिल्ली के रामलीला मैदान में 5 अप्रैल को मज़दूर–किसान संघर्ष रैली में देश के विभिन्न राज्यों से हजारों मज़दूर और किसान एकत्रित हुए।

रैली का आयोजन अखिल भारतीय किसान सभा (ए.आई.के.एस.), सेंटर ऑफ इंडियन ट्रेड यूनियंस (सीटू) और ऑल इंडिया एग्रीकल्चर वर्कर्स यूनियन (ए.आई.ए.डब्ल्यू.यू.) द्वारा संयुक्त रूप से किया गया था। धरना स्थल पर मज़दूरों, किसानों, नौजवानों और महिलाओं की मांगों को रेखांकित करने वाले बैनर लगे हुए थे।

रैली में हरियाणा, पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, जम्मू–कश्मीर, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, केरल, कर्नाटक, असम, त्रिपुरा, मणिपुर, गुजरात और कई अन्य राज्यों के मज़दूरों और किसानों ने भाग लिया। मनरेगा मज़दूरों, आंगनवाड़ी और आशा कर्मियों, बैंक कर्मचारियों, बिजली कर्मचारियों, बी.एस.एन.एल. मज़दूरों, कई अन्य सार्वजनिक क्षेत्र

के उपक्रमों और सेवाओं के मज़दूरों के प्रतिनिधिमंडल थे। इसमें छात्रों, युवाओं और महिलाओं के संगठनों ने भी भाग लिया।

रैली में उठाई गई मांगों में था – खाद्य और सभी आवश्यक वस्तुओं की बढ़ती क़ीमतों पर रोक, सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों, स्वास्थ्य और शिक्षा जैसी आवश्यक सार्वजनिक सेवाओं के निजीकरण को समाप्त करना, ठेका मज़दूरी को समाप्त करना, सभी मज़दूरों के लिए 26,000 रुपये प्रति माह न्यूनतम वेतन, मज़दूर विरोधी चार श्रम संहिताओं को निरस्त करना और बिजली संशोधन विधेयक 2020 को वापस लेना, कृषि उपज के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य (एम.एस.पी.) की क़ानूनी गारंटी, किसानों के लिए ऋण राहत, 60 वर्ष से ऊपर के सभी किसानों के लिए पेंशन आयु सीमा, मनरेगा मज़दूरों को मज़दूरी का नियमित भुगतान, रोज़गार की गारंटी और आंगनवाड़ी मज़दूरों के लिए न्यूनतम मज़दूरी।

रैली में वक्ताओं ने केंद्र सरकार की मज़दूर–विरोधी और किसान–विरोधी नीतियों की आलोचना की। उन्होंने बताया कि सरकार केवल सबसे बड़े कॉर्पोरेट घरानों के हितों की रक्षा के लिए काम करती है, जबकि मज़दूरों और किसानों के अधिकारों पर हमला करती है। उन्होंने किसानों और कृषि मज़दूरों की मांगों को दोहराया। कृषि के लिए आवश्यक वस्तुओं की बढ़ती लागत, राज्य द्वारा गारंटीकृत ख़रीद की कमी और कृषि उपज के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य, किसानों और कृषि मज़दूरों का बढ़ता क़र्ज़ – ये कुछ ऐसी समस्याएं हैं जिन पर प्रकाश डाला गया। निजीकरण, सार्वजनिक उपक्रमों, जंगलों, खदानों आदि की बिक्री की निंदा की गई।

शेष पृष्ठ 8 पर

मज़दूर एकता लहर

हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी की केंद्रीय कमेटी का अखबार

RNI No.- 45893/86 Postal Regd. No. DL(S)-01/3177/2021-23

LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT U (SE)-38/2022-23

Posting Date at DLPSO, 16 & 17 Apr, 2023, Date of publish - 16 Apr, 2023

To ....

स्वामी लोक आवाज़ पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रिब्यूटर्स के लिये प्रकाशक एवं मुद्रक मधुसूदन कस्तूरी की तरफ से, ई–392 संजय कालोनी ओखला औद्योगिक क्षेत्र फेस–2, नई दिल्ली 110020, से प्रकाशित। शुभम इंटरप्राइजेज, 260 प्रकाश मोहल्ला, ईस्ट ऑफ कैलाश, नई दिल्ली 110065 से मुद्रित। संपादक– मधुसूदन कस्तूरी, ई–392, संजय कालोनी ओखला औद्योगिक क्षेत्र फेस–2, नई दिल्ली 110020 email : melpaper@yahoo.com, mazdoorektalehar@gmail.com, Mob. 9810167911

अवितरित होने पर इस पते पर वापस भेजें :

ई–392, संजय कालोनी ओखला औद्योगिक क्षेत्र फेस–2, नई दिल्ली 110020

WhatsApp 9868811998

तमिलनाडु के किसानों की समस्याओं पर सम्मेलन :

अपने अधिकारों की रक्षा में किसानों की जुझारू एकता को मजबूत करने का दृढ़ संकल्प

तमिलनाडु में तंजावुर के पास अम्मापेट्टई में किसानों की समस्याओं और आगे के रास्ते पर चर्चा करने के लिए एक सम्मेलन का आयोजन किया गया था। इसमें सूखाग्रत क्षेत्रों में फ़सलों की सिंचाई के लिए पानी की कमी, सभी फ़सलों के लिए सुनिश्चित न्यूनतम समर्थन मूल्य का अभाव, भंडारण और अन्य बुनियादी सुविधाओं में कमी सहित किसानों के सामने अन्य ज्वलंत मुद्दों पर चर्चा की गई।

सम्मेलन का आयोजन थलनमई उजावर इयक्कम द्वारा किया गया था। इसमें किसान और श्रमिक संगठनों के प्रतिनिधियों के साथ–साथ प्रगतिशील व्यक्तियों ने भाग लिया, जो किसानों के दिन–प्रतिदिन के संघर्ष के साथ निकटता से जुड़े रहे हैं।

वक्ताओं ने बताया कि हिन्दोस्तान के किसान सभी कृषि उत्पादों के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य (एम.एस.पी.) की गारंटी की मांग लगातार करते रहे हैं। सरकार द्वारा निर्धारित एम.एस.पी. किसानों के लिए लाभकारी होनी चाहिए और इससे उनकी रोज़ी–रोटी को सुरक्षा मिलनी चाहिए। वक्ताओं ने बताया कि सरकार 23 फ़सलों के लिए एम.एस.पी. की घोषणा करती है। हालांकि, अक्सर घोषित एम.एस.पी. उत्पादन की लागत के लिये भी पर्याप्त नहीं होती। इसके अलावा, घोषित एम.एस.पी. पर किसानों की उपज को खरीदने की क़ानूनी गारंटी देने से सरकार ने इंकार कर दिया है। दूसरी ओर, सरकार सुनिश्चित करने का कम करती है कि इजारेदार पूंजीपति कृषि बाज़ार पर क़ब्ज़ा जमा सकें और

भारी मुनाफ़ा कमा सकें। किसान नेताओं ने किसानों के अधिकारों के लिए लड़ने और सरकार से गारंटीकृत लाभकारी मूल्य हासिल करने का दृढ़ संकल्प व्यक्त किया।

थलनमई उजावर इयाक्कम के श्री के. थिरुनावुकरसु ने सम्मेलन को एक समिति के अनुभव के बारे में बताया, जो खास तौर पर सूखाग्रस्त क्षेत्रों में फ़सलों की सिंचाई के लिए पानी सुनिश्चित करने के मुद्दे पर ध्यान केंद्रित करती है। समिति में जाने–माने जल प्रबंधन के तकनीकी विशेषज्ञ और कृषि विशेषज्ञ शामिल थे। हालांकि इस समिति ने लगभग एक साल पहले अपने निष्कर्ष और सिफारिशें तमिलनाडु सरकार को सौंप दी थीं, लेकिन सरकार ने इसकी बुनियादी और कम खर्चीली व आसान सिफ़ारिशों को भी लागू नहीं किया है। अपनी सिफारिशों के समर्थन में पर्याप्त डाटा के साथ, समिति ने राज्य के सूखाग्रस्त इलाकों में वर्षा जल के संरक्षण के लिए कई तरीक़े प्रस्तावित किए हैं। इसने मौजूदा जल भंडारण सुविधाओं को और गहरा बनाने, उनमें से गाद निकालने और उनकी ऊंचाई बढ़ाने के साथ–साथ जल संरक्षण के लिए रोधक बांध (चैक डैम), तालाब और झीलें बनाने के सुझाव दिये हैं।

वक्ताओं ने सरकार से इन सिफारिशों को जल्दी से लागू करना सुनिश्चित करने का आह्वान किया। वक्ताओं ने कृषि उपज के लिए भंडारण सुविधाओं की कमी के मुद्दे को उठाया। उन्होंने बताया कि चावल, अन्य अनाज और बागवानी उत्पादों के लिए भंडारण की सुविधाओं में कमी है। उन्होंने कहा कि उचित भंडारण और प्रशीतन भंडारों (कोल्ड स्टोर) सुविधाओं की कमी के कारण हर साल बड़ी मात्रा में कृषि उपज बर्बाद हो जाती है। जबकि सरकार बड़े पूंजीपतियों को कृषि व्यापार और भंडारण में प्रवेश करने के लिए प्रोत्साहित कर रही है, वह जानबूझकर किसानों के उपयोग के लिए भंडारण और गोदाम बनाने से इनकार कर रही है। तमिलनाडु में हमने देखा है कि भारतीय खाद्य निगम द्वारा खुले मैदानों में रखा गया धान बारिश की वजह से ख़राब हो जाता है। हर साल होने वाली राष्ट्रीय उत्पाद की इस भारी बर्बादी के बारे में अधिकारी बिल्कुल भी चिंतित नहीं हैं। वक्ताओं ने मांग की कि सरकार कृषि उपज के लिए पर्याप्त भंडारण सुविधाएं स्थापित करे।

वक्ताओं ने यह भी मांग की कि सरकार को कृषि मशीनरी केंद्रों की स्थापना करनी चाहिए, जिनमें सभी आधुनिक उपकरण और मशीनरी हों और जो मुफ़्त में या मामूली दाम पर इस्तेमाल के लिये दिए जा सकते हों। इससे किसानों पर खर्च का बोझ कम हो सकता है। वक्ताओं ने कहा कि सभी कृषि क्षेत्रों में कृषि उपज और मशीनरी केंद्रों के लिए उचित भंडारण सुविधाओं के निर्माण के लिए आवश्यक धनराशि बड़े पूंजीपतियों को हर साल दिए जाने वाले ऋण और करों में दी जाने वाली छूट की तुलना में कम होगी।

सम्मेलन को संबोधित करने वालों में सिंचाई जल प्रबंधन प्रशिक्षण संस्थान से थिरु पी. कलाइवानन, त्रिची के सहायक कृषि निदेशक (सेवानिवृत्त) इंजीनियर एम. शेखर, सामवेली विवाहगल संगम के इंजीनियर एस. पलानीराजन, पी.डब्ल्यू.डी. के अधीक्षक अभियंता, सेवानिवृत्त इंजीनियर ए. राजारमन, तमिनाडु विवासयिगल संगम के कॉ. सरवन मुथुवेल, झीलों के पुनर्निर्माणकर्ता, कॉ. थंगा कन्नन, थोड़िलालार ओट्टुमई इयक्कम के कॉ. भास्कर, मक्कल अधिकारम के कॉ. कलियप्पन, कम्युनिस्ट पार्टी–पीपुल्स लिबरेशन के कॉ. अरुणाचलम और थलनमई उजवर इयक्कम के कॉ. दुरई मधिवानन शामिल थे। किसानों की मांगों के इर्द–गिर्द जुझारू एकता बनाने के दृढ़ संकल्प के साथ सम्मेलन का समापन हुआ।

http://hindi.cgpi.org/23318

सिरसा में शहीदी दिवस के अवसर पर सभा का आयोजन

26 मार्च को शहीदी दिवस के अवसर पर, हरियाणा के जिला सिरसा के गांव माधोसिंघाना में मज़दूर एकता कमेटी द्वारा एक सभा का आयोजन किया गया। सभा में आगे उठाये जाने वाले कामों की योजना पर बनाई गई। कई साथी राजस्थान से भी सभा में शामिल हुये थे।

सभा को संबोधित करते हुये मज़दूर एकता कमेटी के साथी ने तीनों शहीदों को श्रद्धांजलि दी। उन्होंने कहा लोग आज बढ़ती महंगाई से त्रस्त हैं। मज़दूरों को न्यूनतम वेतन नहीं मिलता है। किसानों को अपनी फ़सल के उचित दाम नहीं मिलते हैं। इसका साफ कारण है यह पूंजीवादी व्यवस्था, जिसमें हमारी मेहनत से पैदा की गई धन दौलत को मुट्ठीभर इजारेदार पूंजीपति लूट ले रहे हैं।

उन्होंने भगतसिंह के विचारों पर प्रकश डालते हुये कहा कि भगत सिंह और हमारे क्रांतिकारियों का सपना था, एक ऐसे समाज की स्थापना करना जहां इंसान द्वारा इंसान के शोषण की संभावना न हो। उनका यह सपना तभी पूरा हो सकेगा, जब देश में मज़दूरों और किसानों के राज की स्थापना की जाये।

सभा में योजना बनाई गई कि इस अख़बार को ज्यादा से ज्यादा मज़दूरों–किसानों तक पहुंचाया जायेगा। अपने अधिकारों के संघर्ष के लिये ज्यादा से ज्यादा लोगों को जागरुक करने के लिये अलग–अलग गांवों में जाकर छोटी–छोटी सभायें की जायेंगी। ज्यादा से ज्यादा लोगों को मज़दूर एकता कमेटी के साथ जोड़ा जायेगा। बहुत की सकारात्मक वातावरण में सभा का समापन हुआ।

http://hindi.cgpi.org/23324

नई दिल्ली में मज़दूरों–किसानों की संघर्ष रैली

पृष्ठ 7 का शेष

बढ़ती बेरोज़गारी और महिलाओं पर बढ़ती हिंसा पर चिंता व्यक्त की गई। वक्ताओं ने राज्य द्वारा आयोजित सांप्रदायिक हिंसा के ज़रिये मज़दूरों और किसानों की एकता को बांटने के बार–बार के प्रयासों और उत्पीड़ित लोगों की मांगों को उठाने के लिए राजनीतिक कार्यकर्ताओं को कैद करने की निंदा की।

यह रैली देशभर के मज़दूरों और किसानों के दिलों में मौजूदा व्यवस्था और सत्ताधारी पूंजीपति वर्ग के मज़दूर–विरोधी, किसान–विरोधी कार्यक्रम के ख़िलाफ़ बड़े गुस्से की अभिव्यक्ति थी।

http://hindi.cgpi.org/23307

हिन्दोस्तान की कम्युनिस्ट ग़दर पार्टी द्वारा प्रकाशित पुस्तक

(हिन्दी, पंजाबी और अंग्रेजी में उपलब्ध)

हिन्दोस्तान ग़दर पार्टी की कथा और हिन्दोस्तान के बदलाव के संघर्ष के लिये वर्तमान में इसका महत्व

पुस्तक का मूल्य : 100 रुपये और डाक खर्च 40 रुपये